JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

स्वास्थ्य में अष्टांग योग की उपादेयता

Dr.Harikant Mishra
Associate Professor
JRD State University Chitrakoot Uttar Pradesh

सारांश :

महर्षि पतन्जलि को आधुनिक योग का पिता माना जाता है। पतन्जलि के द्वारा ही सर्वप्रथम योग व्यवस्थित रुप से संकलन किया गया और अष्टांग योग (म्पहीज स्पउइे ल्वहं) के रुप में अपनी कालजयी रचना 'योगसूत्र' को प्रतिपादित किया गया शारीरिक स्वास्थ्य के लिए विश्व में अनेक पद्धतियाँ प्रचलित हैं और इन पद्धतियों के अनुसार हजारों प्रकार की औषधियाँ भी है। किन्तु योग कदाचित इन सभी पद्धतियों में इसलिए विशेष है क्योंकि इसके द्वारा न केवल शारीरिक स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है वरन् इससे अध्यात्मिक उन्नति के द्वार भी खुलते हैं। इससे हमारे शरीर और मन की स्वस्थता के साथ–साथ आत्मा का भी प्रादुर्भाव होता है। योग द्वारा आत्मा और परमात्मा का पारस्परिक संधान होता है। हमारे प्राचीन ऋषि–मुनियों ने तन, मन और प्राण की शुद्धि एवं परमात्मा की प्राप्ति के लिए योग के आठ अंग बताए गए हैं। योग संतुलन का नाम है। मानसिक स्तर पर अवसाद, उदासी से मुक्ति दिलाकर 'संजीदगी' जीवन्तता और उत्साह उत्पन्न करता है–योग।

सामान्य रूप से भारत में जितनी भी चिकित्सा पद्धतियाँ प्रचलित हैं सभी रोग का निदान करती हैं किन्तु योग न केवल रोग का निदान करता है बल्कि रोग और व्याधि से प्रतिरक्षा भी करता है। योग एक ऐसी पद्धति है जिससे गरीब और अमीर, शहरी और ग्रामीण समान रूप से लाभान्वित हो सकते हैं। इस पद्धति की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें कुछ भी औषधि नहीं लेनी पड़ती है जबकि अन्य पद्धतियों में कोई न कोई औषधि अवश्य लेनी पड़ती है। भारतीय मान्यता के अनुसार सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में दो ही तत्व मुख्य माने गये हैं– प्रकृति और पुरूष। पुरूष–जीवात्मा, परमात्मा, नियन्ता, उपभोक्ता है और प्रकृति–पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश हैं। में पंचतत्व ही मिलकर पुरूष और प्रकृति या जीव तत्व का आश्रय अर्थात् शरीर बनाते हैं। जीव प्रकृति पर अवलम्बित है। अष्टांग योग का ध्येय प्रकृति के इन्ही रहस्यों की जानकारी प्राप्त कर उनसे मुक्ति का मार्ग निकालकर अनन्त समाधि तक पहुँचना है।

इन सभी पर विस्तृत विवेचना करते हुए यह प्रतिपादित किया गया है कि महर्षि पतन्जलि द्वारा निरूपित 'योग' को जीवन में धारण किया जाए तो न केवल शरीर को स्वस्थ रखा जा सकता है बल्कि जीवन के परम लक्ष्य (आनन्द/मोक्ष) को भी प्राप्त किया जा सकता है।

मुख्य शब्द : योग, अष्टांग योग, विश्राम, सन्तुलन, संजीदगी, जीवन्तता, उत्साह, व्याधि, प्रकृति और पुरूष, जीवात्मा, परमात्मा, पंच तत्त्व जीव, हितायु, योगासन, प्राणायाम, तत्त्वानुभूति, प्राणवायु, धारणा, ध्यान ईश्वर–प्रणिधान, आनन्दमय, ज्योतिर्मय, शान्तिमय, स्नायु–संस्थान, समाधि, सम्प्रज्ञात–असम्प्रज्ञात, औषनिसदिक, मृगतृष्णा, स्वरूपशून्यता आदि।

साहित्य अवलोकन– प्रस्तुत शोध–पत्र के लेखन में मेरे द्वारा अनेक महान आध्यात्मिक ग्रन्थों का अध्ययन एवं अवलोकन किया गया है। अतएव मैं उन समस्त ग्रन्थों के प्रति श्रद्धावनत् हूँ। मेरे द्वारा योगसूत्र–पातंजलि, भारतीय योग संस्थान–योग–युवक युवतियों के लिए, दिल्ली–2000, गीताप्रेस गोरखपुर द्वारा प्रकाशित श्रीमद्भगवद्गीता, स्वामी विद्यानन्द–विदेह, योगालोक,वेद संस्थान नई दिल्ली–2000, स्वामी अक्षय आत्मानन्द–योगासन और प्राणायाम स्वस्थ्य वन्य विज्ञान–प्रो0 रामहर्ष सिंह आदि साहित्य , इस शोधपत्र के लेखन में अत्यधिक सहायक सिद्ध हुए हैं। वरिष्ठ आचार्यों एवं उच्चकोटि के साधकों के विचारों के श्रवण और अध्ययन से मुझे यह ज्ञात हुआ है कि अष्टांग योग स्वास्थ्य के लिए अति लाभकारी है। अन्ततः मैं उन साहित्य के अध्ययन और आचार्यों के आशीर्वाद से लोक कल्याणर्थ प्रस्तुत इस शोध पत्र– "स्वास्थ्य में अष्टांग योग की उपदेयता" को लिखने का साहस कर पाया।

प्रस्तावना :

प्राचीन भारत 'जगद्गुरु' के रूप में प्रस्थापित रहा है। यहाँ पर हजारों वर्ष पहले जीवन की समुन्नति के लिए उससे सम्बद्ध सभी क्षेत्रों में चरम विकास की स्थिति थी विश्व में स्वास्थ्य के क्षेत्र में, भारत में आयुर्वेद के साथ–साथ योग का भी विशेष योगदान रहा है। पुरूष की शारीरिक, आध्यात्मिक तथा सामाजिक दृष्टि से सुखावह अवस्था ही स्वास्थ्य है। अनेक स्वास्थ्यकर भावों में योग का विशेष महत्त्व है योग की विविध हठयौगिक क्रियाएँ आसन, प्राणायाम आदि शरीर के लिए तो स्पष्ट रूप से स्वास्थ्यकर है ही, इनका मानस स्वास्थ्य पर भी प्रभाव होता है। **यम–**नियमादि का पालन व्यक्तिगत स्वास्थ्य के अतिरिक्त सामाजिक स्वास्थ्य के लिए हितकर है और 'हितायु' बर्द्धक है। दूसरी तरफ प्रत्याहार, धारणा, ध्यान तथा समाद्धि का अभ्यास मानस तथा आध्यात्मिक स्वास्थ्य के लिए हितकर है। आज योग बहुचर्चित विषय है। पिछले कुछ वर्षों में योग अपने मात्र भारतीय स्वरूप से हटकर अन्तर्राष्ट्रीयता की ओर, व्यक्तिगत साधना मात्र से हटकर व्यापक समाज परक उपयोगिता की ओर तथा आध्यात्मिकता से हटकर वैज्ञानिकता की ओर अग्रसर होता रहा है। आज बहुचर्चित योग अपने प्राचीन औपनिषदिक स्वरूप से भिन्न है। योग अपने उच्च आध्यात्मिक स्वरूप से हटकर भौतिकता की ओर इतना अधिक बढ़ गया है कि यह अपनी मौलिकता भी खोने लगा है अनेक आधुनिक योग के प्रशिक्षकों तथा योग में रूचि रखने वाले लोगों को योग के मौलिक स्वरूप में भ्रम है और वे उसे लगातार भौतिक विद्या के रूप में विकसित करते जा रहे हैं। बुद्धिजीवियों का मानना है कि आजकल जो कुछ भी योग के बारे में देखा जा रहा है, व सुना जा रहा है वह योग का एक पक्ष मात्र है। योग की मूलधारा आध्यात्मिक है। यह तत्त्वज्ञान एवं तत्त्वानुभूति का विज्ञान है।

स्वास्थ्य की महत्त्ता–

आज योग को स्वास्थ्य तथा चिकित्सा विज्ञान के रूप में उपयोग करने का वातावरण है। वास्तविक सुख अनन्त इच्छाओं की पूर्ति के पीछे भागते रहने का नाम नहीं है (वह तो मात्र मृगत्रृष्णा है) बल्कि जीवन में सादगी, संतोष और सदाचार से भी सुख प्राप्त हो, सकता है।

श्री रामचरितमानस में मनुष्य का शरीर प्राप्त होने को भाग्य की बात माना गया है–

बड़े भाग मानुष तन पावा। सुर दुर्लभ सद् ग्रन्थहि गावा।।

भारतीय मान्यता है कि मानव शरीर में जन्म करोड़ों योनियों में से गुजरने के बाद मिलता है। अतः इस शरीर को स्वस्थ रखना प्रत्येक व्यक्ति का परम कर्त्तव्य है मानव जीवन के लक्ष्य– चारों पुरूषार्थ– धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति इस शरीर के माध्यम से ही सम्भव है इसके लिए हमें स्वस्थ रहना आवश्यक है। स्वास्थ्य को सर्वप्रथम सुख माना गया है–

पहला सुख निरोगी काया, दूजा सुख घर में हो माया,
तीजा सुख सुलक्षणा नारी, चौथा सुख पुत्र आज्ञाकारी।
पंचम सुख स्वदेश में वासा, छठा सुख राज में पासा,
सातवां सुख संतोषी जीवन, ऐसा हो तो धन्य है जीवन।।

प्रत्येक मनुष्य सुखी रहना चाहता है लोक संस्कृति में भी सभी मनुष्यों के सुख की कामना की गई है। जीवन सुखी–स्वस्थ और मंगलमय हो इसकी अभिलाषा और कामना वेदों में हमें मिलती है। कहावत है कि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन का निवास होता है। फिर भी मानव मन में व्याप्त तमस वृत्तियाँ जीव को अस्वस्थ बनाने का प्रयास करती हैं जिससे मन प्रायः अशान्त हो जाता है। भारतीय संस्कृति शाश्वत मूल्यों की पोषक है और भारत की आत्मा भारतीय संस्कृति में निहित है। भारतीय संस्कृति के मूलस्रोत वेद है और वेदों में स्वास्थ्य की महिमा का सर्वत्र वर्णन मिलता है।

आयुर्वेद के अनुसार कफ, वायु तथा पित्त की समरूपता स्वस्थता है। किसी एक में वृद्धि या ह्रास होने से चित्त विक्षेप और उसमें अशान्ति व मानसिक–शारीरिक असन्तुलन, उपद्रव होने लगते हैं। इसीलिए अच्छे स्वास्थ्य के लिए शारीरिक समरूपता से ही शान्ति मिलती है और शान्ति ही सुख का कारण है, अशान्त व्यक्ति के लिए सुख कहाँ (अशान्तस्य कुतः सुखम्)।

भारतीय संस्कृति में सभी के सुखी एवं स्वस्थ रहने की कामना की गई है। "सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः" को भारतीय संस्कृति में प्रार्थना मंत्र का स्थान दिया गया है। सभ्यता और संस्कृति के विकास के साथ ही स्वास्थ्य का महत्त्व जुड़ा हुआ है। श्री रामचरितमानस में महाकवि तुलसीदास जी कहते है कि रामराज्य में सुख और समृद्धि व्याप्त है– 'दैहिक दैविक भौतिक तापा, रामराज काछू नहिं व्यापा।"

शरीर को स्वस्थ रखने के लिए भारत में अनेक पद्धतियाँ प्रचलित रही है। इनमें से एक पद्धति है कि 'योग' जो महर्षि पतन्जलि की सम्पूर्ण मानव समाज को एक अनुपम देन है। योग एक पूर्ण विज्ञान है, एक पूर्ण जीवन शैली है, एक पूर्ण चिकित्सा पद्धति है एवं एक पूर्ण अध्यात्म–विधा है। योग की लोकप्रियता का रहस्य यह है कि यह लिंग, जाति, वर्ग, सम्प्रदाय, क्षेत्र एवं भाषा–भेद की संकीर्णता से कभी आबद्ध नहीं रहा है। साधक, चिन्तक, अभ्यासी, वैरागी, ब्रह्मचारी, गृहस्थ कोई भी इसका सानिध्य प्राप्त करके लाभान्वित हो सकता है। आधुनिक मानव–समाज जिस तनाव, अवसाद, अशान्ति, आतंकवाद, अज्ञान और अभाव का शिकार है, उसका समाधान केवल 'योग' के पास ही है। योग मनुष्य को सकारात्मक चिन्तन के प्रशस्थ

पथ पर लाने की एक अद्भुत विद्या है, जिसे करोड़ों वर्ष पूर्व भारत के प्रज्ञावान ऋषियों–मुनियों ने आविष्कृत किया है। स्वस्थ व्यक्ति और सुखी समाज का निर्माण केवल योग की शरण में जाकर ही हो सकता है।

अष्टांग योग–

योग शब्द 'युज्' धातु से बना है, जिसका अर्थ है मिलान या संधान। योग द्वारा आत्मा और परमात्मा का पारस्परिक संधान होता है। हमारे प्राचीन ऋषि–मुनियों ने तन, मन और प्राण की शुद्धि एवं परमात्मा की प्राप्ति के लिए आठ अंग बताए हैं। योग अन्तिम लक्ष्य व्यक्ति को स्वरूपावस्थिति प्रदान करना है। स्वरूपावस्थिति प्राप्त करने के लिए चित्त की समस्त वृत्तियों के निरोध के लिए एक मार्ग बताया गया है जो कि अष्टांग योग के नाम से जाना जाता है। आठ अंगों का वर्णन महर्षि पतन्जलि ने 'पातन्जल योग दर्शन' में किया है। योग के आठ अंग निम्नलिखित है–

'यमनियमासन प्राणायाम प्रत्याहार धारणाध्यान समाधयोऽष्टवंगानि।।[1]

1. यम–(अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह
2. नियम–(शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, तथा ईश्वर प्रणिधान)
3. आसन–(सुख पूर्वक अधिक समय तक एक स्थिति में बैठने का अभ्यास)
4. प्राणायाम–(प्राणों पर नियन्त्रण करना)
5. प्रत्याहार–(विषयों से इन्द्रियों को हटाना)
6. धारणा–(चित्त को बाह्य या अभ्यान्तर, स्थूल व सूक्ष्म विषयों में बाँधना)
7. ध्यान–(विषय में वृत्ति का समान भाव में स्थिर रहना)
8. समाधि–(ध्यान की सर्वोच्च स्थिति)

उक्त आठ अंगों में से प्रथम पाँच –यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, बहिरंग साधन हैं और अन्तिम तीन– धारणा, ध्यान और समाधि अन्तरंग साधन है।

यमः

' अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः[2]' –

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह ये पाँच यम के अंग हैं।

'यमयति निवर्तयाति इति यमः।'

यम शब्द का तात्पर्य पाँच व्रतों की संज्ञा से है जिसे नियत करे उसका नाम यम रखा गया है। जो हमें अवांछनीय कार्यों से बचाता है या मुक्ति दिलाता है, उसे यम कहा गया है।

1 **अहिंसा :**

अहिंसाप्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ बैरत्यागः ।[3]

अहिंसा की स्थिति दृढ़ हो जाने पर उस अहिंसक योगी के निकर सभी हिंसक प्राणियों का बैरभाव समाप्त हो जाता है। अहिंसा अर्थात् किसी भी प्राणी को मन, वचन और कर्म से न मारना, न सताना, दुःख न देना। अर्थात् किसी प्राणी का बुरा न करना। अहिंसा अर्थात् बैर भाव त्यागकर प्रेमभावना को प्रमुख स्थान देते हुए बुराई का सामना करना अहिंसा है।

अहिंसा को व्यापक अर्थ में देखें तो यह सामाजिक न्याय पर आश्रित शिष्ट और श्रेष्ठ आचार है। जो व्यक्ति इसका आचरण करता है, उसमें स्वतः व्यक्तिगत शुचिता का संचार हो जाता है। अहिंसा की तरह 'सत्य' का अभिप्राय है कि जो जिस रूप में देखा या अनुभव किया है उसे यथावत् उसी रूप में प्रस्तुत करना। मन, वचन, और कर्म से सत्य का अनुकरण करने का आह्वान योग में मिलता है।

'सत्य प्रतिष्ठायां क्रियाफलश्रेयत्म्' ।[4]

सत्य में दृढ़ स्थिति हो जाने पर क्रियाफल का भाव शक्ति जो कुछ भी बोलता है वह फलित होने लगती है। भारतीय संस्कृति में सत्य की महिमा सर्वोच्च है। सत्य से ही ब्रह्म का दर्शन और साक्षात्कार संभव है।

अस्तेय का वास्तविक अर्थ अपना वास्तविक हक खाना। धर्म पूर्वक जो वस्तु जितनी मात्रा में अपने को मिलनी चाहिए उसे उतनी ही मात्रा में लेना। मन, वचन और कर्म में समानता से ही अस्तेय की स्थिति प्राप्त हो सकती है। अस्तेय की सिद्धि होने पर सब रत्नों की प्राप्ति हो जाती है।

'अस्तेयप्रतिष्ठायां सर्वरत्नोंपस्थानम् ।[5]'

ब्रह्मचर्य 'ब्रह्मचर्य प्रतिष्ठायां वीर्यलाभः ।[6]'

ब्रह्मचर्य है शरीर की धातुओं और रसों का संवर्धन। ज्ञान और विवेक से ही ब्रह्मचर्य का पालन हो सकता है। ब्रह्मचर्य सत्य, आत्मसम्बल और आत्मज्योति से युक्त होता है।

अपरिग्रह– 'अपरिग्रहस्थैर्य जनम्कथान्तसंबोधः ।[7]'

अपरिग्रह की स्थिति सुदृढ़ हो जाने पर जन्म वृतान्त का ज्ञान हो जाता है, अर्थात् पूर्वजन्म में हम कौन से योनि में जन्म लिए थे, कौन से कुल में जन्म लिए थे, इस जन्म की स्थिति परिस्थिति कैसे हुई, एवं हमारा भावी जन्म कब और कहाँ और कैसे होगा ? ऐसे ज्ञान का उदय अपरिग्रह के साधन के द्वारा होती है। संचयवृत्ति का त्याग करना ही अपरिग्रह है।

नियम : योगशास्त्र में शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान को नियम कहकर संबोधित किया गया है।

"शौच सन्तोष–तपः स्वाध्याय ईश्वर प्रणिधानानि नियमाः।"[8]

नियम का अर्थ है जिसका नियमित अभ्यास हो। शरीर की पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं– स्पर्श, रस, गन्ध, स्वर और दृश्य। इन इन्द्रियों का स्वामी 'इन्दु' वास्तव में मनुष्य का मन ही है। मन का संतुलन संयम के बिना नहीं हो सकता और जीवन में संयम का पालन ही नियम है।

शुचि का अर्थ है पवित्रता– शुचि पूतीभावे। सत्व की अशुद्धि से वैमनस्य हो जाता है जिससे एकाग्रता नष्ट हो जाती है। सत्व की शुद्धि से ही सौमनस्य (मन की शुद्धता तथा प्रसन्नता) प्राप्त होता है।

सन्तोष– प्रयास से मिलता है, केवल परिणाम से ही नहीं। लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जो प्रयास किया जा रहा है, यदि वह ठीक और सही है–योगी को तो इससे ही पूर्ण सन्तोष रहता है। सन्तोष का वास्तविक अर्थ है शम् (संयम व धैर्य) तोष (तुष्टि व प्रसन्नता) बिना धैर्य के प्रसन्नता स्थायी नहीं होती। तम और श्रम दोनों भिन्न–भिन्न है। तप मन और मास्तिष्क का संयम ही तप है। शरीर तथा इन्द्रियों द्वारा सतत साधना ही श्रम है।

स्वाध्याय– का अर्थ है सतत चिन्तन। ईश्वर–प्रणिधान से समाधि की सिद्धि होती है। ईश्वर–प्रणिधान का अर्थ है ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण। जिस प्रकार मछली सदैव जलार्पित और जललीन रहती है, वैसे ही जब कोई अपनी सम्पूर्ण चेतना के साथ ईश्वर में लीन रहता है तो वह समाधि की स्थिति प्राप्त कर लेता है।

योगासन– योग की प्राप्ति के लिए शरीर की जिस स्थिति मे अधिक से अधिक से अधिक देर तक बिना किसी व्याकुलता के रखा जा सके, उसे योगासन कहा जाता है। योग का उपयोग केवल स्वस्थ रहने के लिए ही नहीं, किन्तु रोगों के उपचार के लिए भी सहायक होता है। भारत में योग द्वारा रोगों के निदान के लिए कई संस्थाएँ हैं, जैसे 1 कैवल्यधाम, लोनावाला, पूना 2 योग इन्स्टिटयूट सांताक्रूज, मुम्बई 3 योग फॉर लाइफ एण्ड लिविंग, विश्वायतन योगाश्रम, दिल्ली 4 भारतीय योग संस्थान, पटना आदि (सन्दर्भ–स्वामी अक्षय आनन्द, योग भगाए रोग, प्रतिभा प्रतिष्ठान, नई दिल्ली 2000)। योग द्वारा की जाने वाली चिकित्सा पद्धति पूर्ण वैज्ञानिक और स्वयं चिकित्सा पद्धति है। इसलिए योग के साथ–साथ रोगी को योग्य सात्त्विक आहार, संयम और आचार संहिता का भी पालन करना पड़ता है।

अष्टांग योग के आठो अंग–यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि–समस्त शारीरिक–मानसिक रोगों से मुक्त कराने में काफी प्रभावी है (सन्दर्भ–योगाचार्य श्री ढोलन दास अग्रवाल एवं योगाचार्य श्री कृष्ण कुमार सुमन, योग द्वारा रोगों का उपचार, भारतीय योग संस्थान, नई दिल्ली 2000)।

प्राणायाम– तस्मिन् सति श्रवासप्रश्वासयोर्गतिर्विच्छेदः प्राणायामः।[9]

आसन के सिद्ध हो जाने पर श्वास–प्रश्वास की गति को यथाशक्ति नियन्त्रित करना प्राणायाम कहलाता है।

पतन्जलि योगदर्शन में प्राणायाम के तीन भेद का वर्णन किया गया है। (पूरक, कुम्भक, रेचक)। योग, उपनिषद, धेरण्ड संहिता तथा शिवसंहिता आदि ग्रन्थों में भी इसका वर्णन प्राप्त होता है।

1 **पूरक** : जिस प्रकार से कमल नाल के द्वारा व्यक्ति जल को खींचता है, उसी प्रकार से नासिका द्वारा वायु को खींचकर पूरक प्राणायाम कहा जाता है। इस प्राणायाम में श्वास के द्वारा स्वाभाविक प्राण की गति का निरोध किया जाता है।

2 **कुम्भक** : शरीर को निश्चल रखते हुए श्वॉस और प्रश्वॉस न लेने की अवस्था की स्थिरता को कुम्भक कहते हैं।

3 **रेचक** : इसमें प्राणायाम में प्राण को बहुत ही मंदगति से हृदय से बाहर निकालकर अन्तर स्थान की वायु से रिक्त करके उसी अवस्था में स्थिर रखते हैं। इस प्राणायाम में प्रश्वास के द्वारा प्राण की स्वाभाविक गति का अभाव किया जाता है। इस प्रकार से श्वास निकाल कर स्थिर होने वाली बाह्य वृत्ति को रेचक प्राणायाम कहते हैं।

योगशास्त्र में प्राणायाम का अत्यधिक महत्त्व है। जिस प्रकार अग्नि में सोना आदि धातुएँ गलाने से अशुद्धियाँ दूर होती है, उसी प्रकार प्राणायाम करने से इन्द्रियों की अशुद्धियाँ दूर होती हैं। प्राणायाम योग की आत्मा है। प्राणायाम से शरीर स्वस्थ और निरोगी रहता है। इसमें दीर्घ आयु प्राप्त होती है, स्मरण शक्ति बढ़ती है और मानसिक रोग दूर रहते हैं।

प्रत्याहार– प्रत्याहार का अर्थ है आहार के प्रति सजगता। जिस प्रकार प्राणायाम प्राणवायु ग्रहण करने की कला से सम्बन्धित है उसी प्रकार प्रत्याहार शरीर को समुचित पोषण देने से सम्बन्धि है।

धारणा– मन में किसी विचार या संकल्प को धारण करना ही धारणा है। शरीर क्षणभंगुर है इसलिए इसे क्षीण होना ही है। संसार में जो भी जन्मा है उसकी मृत्यु अवश्य है– उसमें अमरता नही है। अमर तो केवल आत्मा है। देशबन्धश्चिन्तस्य धारणा (देश बन्धः चिन्तस्य धारणा) देश में बाँधना चित्त की धारणा है। देश शब्द का प्रयोग यहाँ अन्तःकरण के लिए हुआ है। हृदय चित्त की सम्पूर्ण चेतना को मस्तिष्क में संचारित करके धारणीय विषय का जो चिन्तन किया जाता है, वह धारणा है।

ध्यान– धारणा के विषय में चित्त का व्यवधान रहित निरन्तर प्रवाहित होते रहना ध्यान है।

' तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम् ।[10]

जैसे नदी जब समुद्र में प्रवेश करती है, तब वह समुद्र के साथ एकाकार हो जाती है। सदृश–प्रवाह हो जाती है। वैसे ही ध्यान के समय सच्चिदानन्द परमेश्वर के अतिरिक्त अन्य विषय का स्मरण नहीं करना, अपितु उसी अन्तर्यामी ब्रह्म के आनन्दमय, ज्योतिर्मय एवं शान्तिमय स्वरूप में मग्न हो जाना ध्यान है। ध्यान आत्मा से साक्षात्कार का नाम है। सद्चित आनन्द की अनुभूति ही ध्यान का अभिप्रेत हैं।

डॉ0 राधाकृष्णन् के शब्दों में –ध्यान चेतना की वह अवस्था है जहाँ समस्त अनुभूतियाँ एक ही अनुभूति में विलीन हो जाती हैं, विचारों में सामन्जस्य आ जाता है, परिधियाँ टूट जाती हैं और विभेदक रेखाएँ मिट जाती हैं। जीवन और स्वतन्त्रता की इस अखण्ड अनुभूति में ज्ञाता और ज्ञेय का भेद नहीं रहता। संकुचित जीवात्मा विराट सत्ता में विलीन हो जाती हैं।'

समाधि– ध्यान की उच्चतम अवस्था को समाधि कहते है।

तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः।।[11]

ध्यान में जब केवल ध्येयमात्र (ईश्वर) के स्वरूप या स्वभाव को प्रकाशित करने वाला अपने स्वरूप से शून्य जैसा होता है, तब उसे समाधि कहते हैं।

आनन्दमय, ज्योतिर्मय एवं शान्तिमय परमेश्वर का ध्यान करता हुआ साधक ब्रह्म परमेश्वर में इतना लीन, तन्मय एवं तद्रूप–सा हो जाता है कि वह स्वयं को भी भूल जाता है, मात्र भगवान् के दिव्य आनन्द का अनुभव होने लगता है, यही स्वरूप शून्यता है। ध्यान एवं समाधि में इतना भेद है कि ध्यान में तो ध्यान करने वाला, जिस मन से, जिस चीज का ध्यान करता है वे तीनों (ध्याता, ध्येय और ध्यान) विद्यमान रहते हैं। परन्तु समाधि में केवल परमेश्वर के आनन्दमय, शान्तिमय और ज्योतिर्मय स्वरूप एवं दिव्य ज्ञान–आलोक में आत्मा निमग्न हो जाती है, वहाँ तीनों का भेद नहीं रहता।

समाधि मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं–

- सम्प्रज्ञात
- असम्प्रज्ञात

सम्प्रज्ञात समाधि– वैराग्य द्वारा योगी सांसारिक वस्तुओं व सम्बन्धी से स्वयं को अलग कर लेता है। एक प्रकार से सांसारिक वस्तुओं का त्याग कर देता है, उसका मन एकाग्र चित्त हो जाता है। यही सम्प्रज्ञात समाधि है।

असम्प्रज्ञात समाधि– इसमें मन जिसका ध्यान कर रहा होता है उसी में उसका मन लीन रहता है। इसमें विचार शून्य हो जाते हैं। समाधि प्राप्त व्यक्ति का व्यवहार सामान्य व्यक्ति से अलग हो जाता है। वह सभी में ईश्वर को ही देखता है। समाधि में लीन होने वाले योगी को अनेक प्रकार की दिव्यज्योति और अलौकिक शक्ति का ज्ञान प्राप्त स्वतः हो जाता है।

निष्कर्ष–

प्रत्येक मनुष्य की कामना रहती है कि उसका शरीर स्वस्थ रहे, क्योंकि स्वास्थ्य के बिना जीवन व्यर्थ है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष आदि भी स्वास्थ्य के बिना प्राप्त नहीं हो सकते। इसीलिए चरक ने लिखा है–'धर्मार्थ काम मोक्षाणामारोग्यं मूलभूत्तमम्'।

योग के अष्टांग अंगों का जो क्रम निर्धारित है वह सर्वथा वैज्ञानिक है। प्रथम यम का अभ्यास करना चाहिए। जब यम का अभ्यास सिद्ध हो जाए, तब हमें नियम का अभ्यास करना चाहिए। यम–नियम के सिद्ध होने पर शेष अंगों की सिद्धि सरल हो जाएगी। योग परमसत्ता से मिलाने का मार्ग है। योग के द्वारा संयमित जीवन शान्ति, प्रेम, सद्भाव और संतुलन का मार्ग प्रशस्त होता है। योग में संयम की महत्ता प्रतिपादित की गयी है। जीवन का सम्बन्ध शरीर (इन्द्रियों) और मन से है और इन दोनों में संयम स्वास्थ्य के लिए अपेक्षित है। सुख–दुःख प्रसन्नता आदि अनुभूतियों पर नियन्त्रण योग द्वारा संभव है। आहार–विहार में संयम करना स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। संयम रखने से समता या समत्व की भावना विकसित होती है। स्नायु–संस्थान को जैसा अभ्यास कराएंगे वह वैसा ही अभ्यस्त होगा। इस प्रकार स्वस्थ और सुखमय रहने के लिए 'योग' की जीवन में उपादेयता सिद्ध होती है। यदि महर्षि पतंजलि द्वारा निरूपित 'योग' को जीवन में धारण किया जाए तो न केवल शरीर को स्वस्थ रखा जा सकता है अपितु जीवन के परम लक्ष्य को भी प्राप्त किया जा सकता है।

आधुनिक जीवन शैली से उद्भूत समस्त दुष्परिणामों और जटिलताओं का निदान योग द्वारा सरलतापूर्वक किया जा सकता है। योग स्वास्थ्य की दृष्टि से महान भारतीय सांस्कृतिक विरासत है।

(डॉ0 हरिकान्त मिश्र)
उपाचार्य–दर्शनशास्त्र
जगद्गुरु रामभद्राचार्य
दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय
चित्रकूट

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

पतन्जल योग सूत्र पा.यो.सू. (2129)

पतन्जल योग सूत्र पा.यो.सू. 2/30

पतन्जल योग सूत्र 2/35 योगसूत्र।

पतन्जल योग सूत्र 2136 योगसूत्र

पतन्जल योग सूत्र 2/37 योगसूत्र

पतन्जल योग सूत्र 3/38 योगसूत्र

पतन्जल योग सूत्र 2/39 योगसूत्र

पतन्जल योग सूत्र 2/32 योग सूत्र

पतन्जल योग सूत्र योग दर्शनः 2/49

पतन्जल योग सूत्र योग दः 3.2

पतन्जल योग सूत्र योग.द. 3.3